IJAER/July-August 2015/Volume -4/Issue-1/Article No-3/ 12-16 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

संस्कृत साहित्य में भारतीय समाज पर आधारित महाकाव्यों का विवेचन

SANDEEP KUMAR
Research Scholar
Department of Sanskrit Pali and Prakrit
Kurukshetra University, Kurukshetra
Haryana

सार–

विश्व की समस्त भाषाओं का शिरोन्मुकुट, समग्र उदात्त एवं उज्जवल विचारकों की मनोरम में जूष्पा, प्राचीन भारत के साहित्यिक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, आध्यात्मिक सामाजिक और राजनैतिक जीवन की कमनीय–कुंजिका तथा पुरूषार्थ–चतुष्दय (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) का निर्मल मुकुट है संस्कृत भाषा। संस्कृत साहित्य में अद्वितीय काव्य परम्परा विद्यमान है। "वाक्यं रक्षात्मकं काव्यम्" अर्थात् रसात्मकवाक्य को काव्य कहते हैं। यशः प्राप्ति, धनलाभ, व्यवहारज्ञान, अनिष्ट, निवारण, शान्तिजन्य आनन्द तथा पत्नी के मृदुल उपदेश वाले काव्य की परिभाषा देते हुए आचार्य मम्मट कहते हैं–

"तददोषां शब्दार्थौ सगुणावनलड.कतौ पुनः क्वापि" काव्यधारा में महाकाव्य का अद्वितीय स्थान है। आधुनिक संस्कृत साहित्य में भी महाकाव्यों की रचना अभूतपूर्व है।

प्रस्तावाना–

संस्कृत साहित्य भारतीय समाज के भव्य विचारों का रूचिर दर्पण है। समाज जिस प्रकार का होगा वह उसी प्रकार के साहित्य में प्रतिबिम्बित रहता है। समाज के रंगरूप, वृद्धि–ह्रास, उत्थन–पतन, समृद्धि–व्यृद्धि के निश्चित ज्ञान प्रधान साधन तात्कालिक साहित्य होता है। अतः संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का प्रधान वाहन रहा है। क्योंकि हमारा साहित्य परा और अपरा विधाओं का मनोरम भाण्डागार है, जिसके रहस्यों का पता संस्कृत भाषा के ज्ञान से ही किया जा सकता है।

संस्कृत साहित्य सर्वांगीण परिपूर्ण है। मानव जीवन के लिये पुरूषार्थ–चतुष्टय–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का महत्व संस्कृत साहित्य में विशेष उल्लेखनीय है प्राचीन ग्रन्थकारों में भौतिक जगत् कते साधन भूत अर्थशास्त्र और कामशास्त्र पर लेखनी चलायी है। कविवर राजशेखर ने साहित्य विद्या को "पंचमी विधा" कहा है जो प्रमुख चार विधाआं–पुराण, न्याय (दर्शन), मीमांसा और धर्मशास्त्र का सारभूत है। कविवर बिल्हण ने काव्य रूपी अमृत को साहित्य समुद्र के मन्थन से उत्पन्न होने वाला बतलाया है। संस्कृत साहित्य में भी ऐसे उपजीव्य काव्य (रामायण, महाभारत आर श्रीमद्भागवत) विद्यमान हैं जिनसे संस्कृत भाषा तथा अर्वाचीन प्रान्तीय भाषाओं के कवियों ने अपने विषय के निर्देश के लिये तथा काव्यशैली के विमल विधान के निमित्त सतत उत्साह तथा अभ्रान्त स्फूर्ति ग्रहण की और आज भी वे ग्रहण कर रहे हैं।

आदि कवि की वाणी पुण्यसलिला भागीरथी है जिसमें अवगाहन कर पाठक तथा कवि स्वयं को पुनीत हुआ ही अनुभव नहीं करते वरन् रसमयी काव्यशैली के ह्रदयावर्जक स्वरूप को समझने में भी कृतकृत्य होते हं। काव्य तथा नाटकों को विषय निर्दश करने में रामायण एक अक्षुण्ण स्रोत हैं जिसको आधार मानकर अनेकानेक काव्य–महाकाव्य लिखे गये। आधुनिक संस्कृत साहित्य में रामायण को उपजीव्य मानकर अनेक महाकाव्य लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। ऐसे ही अटठारवीं शताब्दी के प्रसिद्ध कवि रामपाणिवाद कृत महाकाव्य "राघवीयम्" का उपजीव्य बाल्मीकि रामायण ही है।

"राघवीयम्" एक उच्चकोटि का महाकाव्य है जो महाकाव्य के सभी लक्षणों से परिपूर्ण तो है ही साथ ही वह "शिशुपालवधम्" और "नैषधीयचरितम्" जैसे महाकाव्यों की तुलना में किसी कृति से कम नहीं हैं।

श्रीरामविजयम्–मण्डला (म0प्र0) निवासी रूपनाथ "झा" के इस महाकाव्य में नौ सर्ग हैं जिनमें मृगया के लिए वनगमन तथा सिंहासनारोहण की कथा को लेकर चला गया है। इसमें कवि ने चमत्कार प्रदर्शन में अधिक शक्ति लगायी है। अतएव "राघवीयम्" महाकाव्य के समान "श्रीरामविजयम्" में लालित्य का अभाव है।

रामचरितम्–कुटग्गल्लूर गोदवर्म विद्वान इलय तम्बूरान् (1800–1851) का यह तेरह सर्गों का अपूर्ण महाकाव्य है। तथापि, इसमें राम की कथा को कवि ने पहली बार नये उप्रमानों के साथ जोड़ने का प्रयास किया है।

वात्युद्भवः–कुटग्गल्लूर गोदवर्म विद्वान इलय् तम्बूरान प्रणति इस महाकाव्य में बारह सर्ग हैं जिसमें बालि की महेन्द्र पर विजय वर्णित की गयी है।

सीतास्वयंवरम्–कुट्टमन्तु चेरिय रामकुरप (1847–1906 ई0) का यह महाकाव्य यमक–प्रधान है। इसमें यमकालंकार के द्वारा सीता स्वयंवर का यशोगान किया गया है।

सीतापरिणयम्–सूर्यनारायण अध्वरिंका महाकाव्य कथा प्रवाह की दृष्टि से उत्तम महाकाव्य नहीं कहा जा सकता है। इसी प्रकार काशीनाथ का महाकाव्य "वैदेहीपरिणयम्" भी कथा प्रवाह की दृष्टि से सफल नहीं कहा जा सकता।

अभिनवरामायणम्–श्रीमती कामाक्षी द्वारा रचे गये इस महाकाव्य में चौबीस सर्ग हैं, तथा कविकुलगुरू कालिदास की शैली के अनुकरण पर रचे गये इस महाकाव्य को पढ़कर प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जा सकता है।

रामचरितपूरणम्–कवि सार्वभौम कुडंगल्लूर कुच्चुनि तम्बुरान् (1858–1926 ई0) ने रामचरित को आधार मानकर इस महाकाव्य की सर्जना की है। इसमें कवि ने गोदवर्म विद्वान इलय तम्बुरान् के तेरह–सर्गों तक लिखे गये अपूर्ण महाकाव्य को पूर्ण कर बत्तीस सर्गों में प्रस्मतुत किया है।

रामाभ्युदयम्–अन्नदाचरण तर्कचूड़ामणि का "रामाभ्युद्धयम्" महाकाव्य अलंकार प्रधान है। अलंकार प्रदर्शन की भावना से कवि ने कथावस्तु के प्रवाह पर ध्यान नहीं दिया। अतएव, इस महाकाव्य की कथावस्तु खण्डित सी हो गयी प्रतीत होती है।

जानकीहरणम्–जयपुर के प्रसिद्ध कालिपद बाबू का यह महाकाव्य एक भावप्रधान मात्र रचना है। इसमें रावण द्वारा मायावी ढंग से सीता के हरण की घटना को प्रतिपादित किया गया है।

हनुमदिलासम्–रामानुजाचार्य के शिष्य सुन्दराचार्य कृत इस महाकाव्य में अन्जनानन्दन हनुमान की बालक्रीड़ाओं का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया गया है। इतना ही नहीं इस महाकाव्य में हनुमान के जीवन के विविध आयामों को भी प्रस्तुत किया गया है।

सीतास्वयंवरम्–रामकुरूप्प के ही समान बटुकनाथ शर्मा (1895–1944) ने यह महाकाव्य रचा है। किन्तु कवि ने इसे यमकपूर्ण न बनाकर सुबोधपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है। अतएव, यह रूचिकर बन गया है। एतदर्थ, इसका एक श्लोक द्रष्टव्य है–

"ओवे महिममधुरं सदामुकुन्दं,
परोभयन्महिममधुरम्।
हाटकरूचिपटलसितं स्मितं,
दधानं शशिप्रभापटलशीलम्"।।

सीताचरितम्–इस महाकाव्य में दस सर्ग और नौ सौ चौरानवें पद्य हैं। इसके प्रणेता डॉ0 रेवाप्रसाद द्विवेदी हैं। इस महाकाव्य की सर्जना का श्रीगणेश 1956 ई0 में हुआ तथा 1968 ई0 में पूर्ण होकर "सागरिका" नामक संस्कृत त्रिका में प्रकाशित भी हुआ। पुस्तकाकार रू में सन् 1978 ई0 में "चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी" से प्रकाशित भी हो चुका है।

वनवास की अवधि को पूर्ण करने के बाद पत्नी सीता व अनुज लक्ष्मण सहित भगवान श्रीराम के अयोध्या लौटने तथा उनके भव्य स्वागत से इस महाकाव्य का श्रीगणेश होता है। समस्त राजपरिवार एवं प्रजाजनों की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ विधिवत् राज्याभिषिक्त करके भगवती सीता सहित श्रीराम को बड़ी धूम–धाम के साथ राजगद्दी पर बैठाया जाता है।

रामराज्याभिषेक्–इस महाकाव्य में सात सर्ग हैं। इसके रचयिता विरार राघव (1800–1850) हैं इसमें रामावतार से लेकर राम के राज्याभिषेक तक की कथा वर्णित है।

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि संस्कृत साहित्य में रामचरित को आधार मानकर अनेकशः महाकाव्य लिखे गये हैं। इन महाकाव्यों की परम्परा में कवि रामपाणिवाद का स्थान सर्वप्रथम है। महाकाव्यों का विवेचन करने से पूर्व काव्य क्या है? इस पर विचार कर लेना अप्रासंगिक न होगा। काव्य को विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग ढ़ग से परिभाषित किया है। तद्यथा–

काव्य विवेचन–काव्य शब्द का अर्थ कवि की रचना है अर्थात् कवि द्वारा जो कार्य किया जावे अतः कवि जिस किसी विषय का चमत्कारी सामाजिकों का हृदयहारी वर्णन जिन शब्दों में करता है, वे शब्द ही काव्य हैं। महाभारत के प्रणेता व्यास जी ने "कृतं येनदं भगवन् काव्यम् परमपूजितम्" वाक्य कहकर कवि और काव्य की चर्चा की है काव्य के लक्षणकारों में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख हैं–

(1) भरत	(2) वेदव्यास	(3) भामह
(4) दण्डी	(5) वामन	(6) रूद्रट
(7) आनन्दवर्धन	(8) कुन्तक	(9) भोज
(10) मम्मट	(11) हेचन्द्राचार्य	(12) विद्यानाथ

(13) वाम्भट्ट प्रथम (14) वाम्भट्ट द्वितीय (15) जयदेव
(16) विश्वनाथ (17) गोविन्द ठक्कुर (18) पण्डित राज जगन्नाथ।

नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरत–काव्य का लक्षण प्रस्तुत करने वालों में महामुनि भरत का प्रथम स्थान है। नाट्यशास्त्र के सोलवें अध्याय के एक सौ अट्ठारहवें श्लोक में कवि ने काव्य की सात विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। वह उत्तम काव्य हैं–

(1) जो कोमल व मनोहर पदों से युक्त हों,
(2) गूढ़ शब्द एवं गूढ़ार्थ से हीन हो,
(3) सामान्य लोगों के समझने के योग्य हो,
(4) युक्तियुक्त हो,
(5) नृत्य में उपयोग करने के योग्य हो,
(6) अनेक रसें का स्रोत हो एवं
(7) सन्धियों के सन्धान से युक्त हो।

महाकाव्य का स्वरूप–महाकाव्य का शास्त्रीय लक्षण प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं होता है। लक्ष्य के आधार पर लक्षण की कल्पना की जाती है–इस नीति के अनुसार बाल्मीकि रामायण तथा कालिदासीय महाकाव्यों के विश्लेषण करने से आलोचकों ने महाकाव्य के शास्त्रीय रूप का अनुमान किया तथा आलंकारिकों ने अपने अलंकार ग्रन्थों को उसके लक्षण प्रस्तुत किये। इन आलंकारिकों में आचार्य दण्डी सर्वप्राचीन हैं, जिनका महाकाव्य का लक्षण सर्वप्राचीन माना जाता है। आचार्य दण्डी ने अपने काव्यादर्श में महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों को लेखनीबद्ध किया है। उनके अनुसार महाकाव्यों की रचना सर्गों में भी जाती है। उनमें एक ही नायक होता है, जो देवता होता है अथवा धीरोदान्त गुणों से युक्त कोई लीन क्षत्रिय होता है। उसमें एक वंश के बहुत से राजा भी हो सकते हैं जैसे रघुवंश में। श्रृंगार रस और शान्त रसों में से कोई भी एक रस मुख्य (अंगी रस) होता है अन्य रस गौण रूप से रखे जाते हैं। इसमें नाटक की सब सन्धियाँ होती हैं। कथानक इतिहास प्रसिद्ध होता है अथवा किसी सज्जन का चरित्र वर्णन किया जाता है। प्रत्येक सर्ग में एक ही प्रकार के वृत्त में रचना की जाती है, परन्तु, सर्ग के अन्त में वृत्त (छन्द) परिवर्तन कर दिया जाता है। सर्ग न तो बहुत बड़े होने चाहिए और न बहुत छोटे ही। सर्ग आठ से अधिक होने चाहिए तथा प्रत्येक सर्ग के अन्त में आगामी कथानक की सूचना होनी चाहिए। वृत्त को अलंकृत करने के लिए सन्ध्या, सूर्योदय, इन्द्रोदय, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, वन, ऋतु, समुद्र, नदी, पर्वत आदि प्राकृतिक दृश्यों का होना अनिवार्य रूप में किया जाता है। बीच–बीच में वीर रस के प्रसंग में युद्ध, मन्त्रणा, शत्रु पर चढ़ायी आदि विषयों का भी सांगोपांग वर्णन उपलब्ध होता है। नायक तथा प्रतिनायक का वर्ष काव्य की मुख्य वस्तु होती है। महाकाव्य का प्रमुख उद्देश्य धर्म तथा न्याय की विजय एवं धर्म व अन्याय का विनाश होना चाहिए। उसमें यत्र–तत्र दुष्टों को निन्दा और सज्जनों का कीर्तन भी होता है। यथा बाल्मीकि रामायण में महाकाव्य में महाकाव्य में मंगलाचरण आशीर्वादात्मक, सकारात्मक अथवा वस्तु निर्देशात्मक होना चाहिए।

इन लक्षणों का विधान उस समय किया गया जबकि संस्कृत में अनेक महाकाव्यों की रचना हो चुकी थी। क्योंकि लक्षण ग्रन्थों के निर्माण के उपरान्त ही लक्षण ग्रन्थों का प्रणयन होता है। आचार्य दण्डी ने अपने पूर्ववर्ती बाल्मीकि, कालिदास आदि महाकवियों के ग्रन्थों को आधार मानकर ही लक्षण ग्रन्थों का प्रतिपादन किया होगा।

भारवि में मूल कथा के साथ दुरतः सम्बद्व ऐसे विषय पांच सगों तक (4,5,8,9,10) तथा माघ में छह सर्गो (6–11) तक देखे गये है। जबकि आचार्य विश्वनाथ ने महाकाव्य के लक्षण कुछ इस प्रकार से गिनाये है। सर्गो से (अवान्तर अर्थो के वर्णन से उपलक्षित) से निबद्व महाकाव्य होता है उस महाकाव्य में धीरोदान्त गुणों से युक्त सत्कुलीन एक क्षत्रिय नायक होता है तथा नैषध में नल। अथवा एक वंश में उत्पन्न होन वाले कुलीन अनेक भी (धीरोदान्त गुणों से युंक्त) क्षत्रिय राजा नायक हो सकते है। श्रृगार, वीर , और शानत में से कोई एक अंगीरस के रूप में स्वीकार किया जाता हे यदाकदा, करूण रस का भी ग्रहण किया जाता हो इसलिए करूण रस प्रधान रामायण का भी महाकाव्यत्व समझना चाहिए। अन्य सभी रस गौण होते है। मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहन नाटक की सन्धियां भी इसमें होती है। इतिहास प्रसिद्व (महाभारतादि में प्रसिद्व) अथवा अन्य इतिहास से अदभुत कथानक से भिन्न लोकप्रसिद्व सज्जन विषयक कथानक होता है। पुरूषार्थ चतुष्ट्य (धर्म, अर्थ , काम और मोक्ष) में से किसी एक की सिद्धि प्राप्त करना महाकाव्य का प्रमुख प्रयोजन होना चाहिए। महाकाव्य का प्रारम्भ नमस्क्रियात्मक, आशीर्वादात्मक अथवा वस्तुनिर्देशत्मक मंगलाचरण से होता है। महाकाव्य में प्रसंगवश खलादिकों की निन्दा और सज्जनों के गुणों का वर्णन उसके उत्कर्ष को बतलाता हैं इसका अभिप्राय यह नहीं कि महाकाव्य के अन्दर इनका वर्णन होना ही चाहिए। अतएव, यदि किसी काव्य के अन्दर इनका अभाव है तब भी उसके महाकाव्यत्व होन में कोई

क्षति नहीं एक प्रकार के पद्यों में समाप्ति पर (सर्ग के अन्त में) अन्य छन्दों वाले पद्य विशेषों से न बहुत कम और न बहुत अधिक आठ से अधिक (आठ से कम नही) सर्ग इस महाकाव्य में होने चाहिए। किसी–किसी महाकाव्य में कोई सग्र अनेक प्रकार के छनदों से अच्छाविदत होता है। यथा – "शिशपालवधम्" में चतुर्थ सर्ग और "किरातार्जनीयम्" में पंचम सर्ग । सर्ग की समाप्ति पर आने वाले सर्ग की कथा की सूचना होनी चाहिए। सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, ऋतु, रजनी, अन्धकार, दिन, प्रातः, मध्यान्ह, आखेट, पर्वत, नदी, झरने, वन और सागर का वर्णन महाकाव्याों मं अपेक्षित है। इसके साथ ही, सम्भोग और विप्रलम्भ श्रृंगार, वीर अथवा शांन्त में से कोई एक अंग्रीरस के रूप में होना चाहिए। मुनि (नारद आदि) स्वर्ग, पुर, रूज्ञ, रण, यात्रा, विवाह, मन्त्र (चार उपायों की मन्त्रणा), पुत्र का जन्म, आदि का सांगोपांग वर्णन महाकाव्य के अन्तर्गत होना चाहिए चरित्र के नाम से कवि के नाम से नायक के नाम से अथवा किसी दुसरे के नाम से महाकाव्य का नाम रखना चाहिए। इसके साथ ही सर्ग का नाम सर्ग का नाम सर्ग में वर्णित कथा के नाम से होना चाहिए। यथा सन्ध्यावर्णनंनाम दशमः सर्गः महाकाव्य परपाश्चात्य मत – पाश्चात्य मत से महाकाव्य (एपिक) दो प्रकार के होते है। (1) विकसित महाकाव्य (एपिक ऑफ ग्रोथ) (2) कलापूर्ण महाकाव्य (एपिक ऑफ आर्ट) विकसित महाकाव्य वह है जो अनेक शताब्दियों से अनेक कवियों के प्रयत्न से विकसित होकर अपने वर्तमान रूप में आया हौ। वह प्राचीन भाषाओं के आधार पर रचित महाकाव्य होता है। जैसे ग्रीक महाकवि होमर का "इलियड" और "ओडेसी" नामक युगल महाकाव्य। इसका वर्तमान परिष्कृत रूप होमर की प्रतिभा का परिणाम है, परन्तु गाथा चक्रों के रूप में दे । प्राचीनकाल से बन्दीजनों के द्वारा गाये जाते थे। "" कलापूर्ण महाकाव्यवह है जिसे एक ही कवि अपनी काव्यकला से गढ़कर तैयार करता हैं इसमे प्रथम श्रेणी के काव्यों के समग्र गुण विद्यमान रहते है। परन्तु यह रहता है एक ही कव की प्रौढ प्रतिभा का परिणाम। जैसे लैटिन भाषा में वर्जिल कवि द्वारा रचित "इनीड" महाकाव्य। वर्जिल ने अपने लिए होमर की आदर्श माना और उन्हीं की काव्यकला का पूर्ण अनुसरण अपने महाकाव्यों में किया। मिल्टन के "पैरेडाइस लास्ट" तथा "पैरेडाइस रिगेण्ड होमर"। वर्जिल तथा दाते में महाकाव्यों के सुमान उत्कृष्ठ मान्य "कलापूर्ण महाकाव्य" है। इस दृष्टि से यदि संस्कृत काव्यों का वर्गीकरण किया जाये तो बाल्मीकि रामायण प्रथम श्रीणी में रखा जायेगा। तथा रघुवंश एवं "शिशुष लिवधम्" आदि द्वितीय श्रेणी में ।

उपयुक्त विवेचन के आधार कहा जा सकता है कि महाकाव्य के ये लक्षण सामान्य लक्षणमात्र है, जिनका अक्षरशः पालन सभी महाकाव्यों में कदापि सम्भव नही है" महाकाव्य के रूप का जहा तक सम्बन्ध है, भारतीय और पाश्चात्य आदर्शो में विशेष अन्तर नही है। हा उसके प्रकारों में भिन्नता अवश्या है।

राघवीयम् का महाकाव्यत्व – "राघवीयम्" एक महाकाव्य है जिसमें बीस सर्ग है और व भी दो भागो (पूर्वाद्ध और उत्तरार्द्ध) में विभक्त है,। जबकि, काव्यशास्त्रीय दृष्टि से महाकाव्य में कम से कम आइ सग्र होने चाहिए और इस महाकाव्य में बीस सर्ग है। प्रत्येक सर्ग के अन्त में आगामी कथानक की सूचना भी मिलती रहती है।

तद्यथा–

"तटेगोदावर्यास्तरूणातरूषण्डैरपिहिते,
तरंगव्यासंगप्रकृतिशिशिरस्वच्छसिकते।
समासीनः श्रीमानुनजकृतपणोदिवसिते,
तपश्चर्या वर्या चिरमकृत सीतासहचरः।"

कवि रामपणिवाद ने "राघवीयम्" को स्वयमेव महाकाव्य कहा है। "इति रीरामपणिवाद विरचित राघवीये महाकाव्ये..... ... सर्गः" यह महाकाव्य विद्यर्थियों के अध्यनार्थ लिखा गया हे–

"रामेण पाणिवादेन राघ्ज्ञवीयमिदं कृतम्।
तेनैव बालपाठयाख्याप्याख्यापि धीमता ।।

अपि च–

"रामेण पिणिवादेन रचितं हि यथामति।
राघवीयं महाकाव्यं बालव्युत्पतित्लबधये"।
राघवीयं महाकाव्यं बालव्युत्पत्तिलबधये। "

कवि रामपाणिवाद प्रणीत इस महाकाव्य का प्रारम्भ काव्यशास्त्रीय लक्षणों के आधार पर सस्तुनिर्देशत्मक, नमस्क्रियात्मक अथवा आशीर्वादात्मक में से किसी एक वचन के द्वारा किया जाता है। प्रस्तुत महाकाव्य वस्तुनिर्देशत्मक मंगलाचरण से प्रारम्भ हुआ है जो इस प्रकार है

"श्रिय प्रसूतिर्मनुवंश्जनमना–
मभूदयोध्येति पुरी महीभुजाम्।
स तां भुनमि स्म सतां
पुरःसरो महारथः पंक्तिरथहवयोपृपः"

सम्प्रति, पश्न यह उठता है कि इस महाकाव्य का अंगीरस क्या है। काव्यशास्त्रीय लक्षणों के अनुसार महाकाव्य का अंगी रस श्रृंगार वीर अथवा शान्त में से एक का होना अपेक्षित है। "राघवीयम्" महाकाव्य का अंगी रस वीर रस है अन्य रस श्रृंगार, शान्तं,.करूण, रोद्र, वीभत्स हास्य, वात्सल्य आदि गौण रूप में स्वीकार किये गये हैं।

निष्कर्ष–

राघवीयम् का उपजीव्य बाल्मीकि रामायण है और इस महाकाव्य में भी कथा के स्वरूप में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं मिलता है। क्योंकि, रामायण एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें प्रकृति वर्णन के अनेकानेक स्थल विद्यमान हैं। यथा–आरण्यक में सीताहरण से सन्तप्त पर्वत श्रेणियों द्वारा शिखर रूपी भुजाओं को उठाकर प्रपात के बहाने अश्रु बहाकर रोने का उल्लेख कवि का अभिराम वर्णन है। रामायण में अरण्यकाण्ड, किष्किन्धा काण्ड तथा सुन्दर काण्ड का विस्तार वनभूमि में हुआ है। इसी कारण रामायण के कवि को वन्य≥कृति कवि रामपाणिवाद पर भी पड़ा है। जैसे–लंका में प्रवेश के समय पवनतनय हनुमान की दृष्टि उसके अभिराम उपवन पर जाती है। रावण की वह स्वर्णमयी लंका अनेक उपवनों से युक्त है जिसके सरल कर्णिकार, कोविदार, असन, अशोक व खजूर के वृक्ष पुष्पित हैं और झुके हुए हैं। वहाँ अनेक सरोवरों में कमल खिल रहे हैं जिन पर भ्रमर मंडरा रहे हैं और उनमें हंस, करण्डव इत्यादि पक्षी कलरव कर रहे हैं। कोकिल कूल रही है, मयूर केका के साथ नृत्य कर रहे हैं, भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। लंका में वापियों के चारों ओर विशाल वृक्ष लगे थे, छोटी–छोटी सरिताएं कलरव कर रही थी इत्यादि वर्णन अशोक वाटिका के प्रकृति वर्णन को मुखरित करने में सहायक हुए हैं। इसी प्रकार कवि भयानक दृश्यों को उपस्थित करने में भी पूर्णतया सफल रहे हैं। जैसे विराध नामक राक्ष का आगमन, तातका आगमन, खरदूषणागमन, रावण द्वारा सीता हरण प्रसंग हैं। इस प्रकार "राघवीयम्" महाकाव्य का अवर्पचीन संस्कृत काव्यों में विशेष महत्व है। अतः आधुनिक संस्कृत महाकाव्य परम्परा में "राघवीयम्" से उत्कृष्ट काव्य बहुत कम है। रामपाणिवाद की कान्ति को मुखारित करने में यही अकेला महाकाव्य पूर्णतया सक्षम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. "आनन्दो ब्रहमेतिव्यजानात् आनन्दादि एवं खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्तभिसंविशन्ति।। – तैत्तिरीयोपनिषद्ध, भृगुवल्लीटीका, पृ0–203"
2. काव्यात्ममीमांसा, 2/2
3. "रसं ह्येवायं लब्ध्वाडनन्दी भवति,–तै0उ0, पृ0–191"
4. नहि रसाद्धते कश्चिदर्भः प्रवर्तते।– नाट्यशास्त्र, पृ0–273
5. पुष्पावकीर्णाः कर्त्तव्याः काव्येषु हि रसा बुधैः। वहीं, 7/128
6. लक्ष्मीरिव बिना त्यागान्न वाणी भांति नीरसा। – अग्निपुराणम्, 339/9
7. काव्यालंकार, 1/21, काव्यादर्श, 1/18
8. "दीप्तिरसत्वं कान्तिः"। काव्यालंकारसूत्र, 3/2/15
9. अलक्ष्यक्रमो ध्वनेरात्मा रसादि....। – ध्वन्यालोक, पृ0–380
10. कविना काव्यमुपनिबन्धनता सर्वात्मना रसपरतन्त्रेण भवितव्यम्। वही, पृ0–308